पुरुषार्थ की अवधारणा

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी,

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

पुरुषार्थ चतुष्टय का सिद्धान्त भारतीय संस्कृति की महत्त्वपूर्ण विशेषता है। इस सिद्धान्त की संरचना भारत के ऋषियों, मुनियों और विद्वज्जनों ने मानव-जीवन के आध्यात्मिक और व्यावहारिक पक्ष को दृष्टि में रखकर की थी। वस्तुतः प्राचीन काल के भारतीय विचारकों ने मनुष्य के जीवन को आध्यात्मिक, भौतिक और नैतिक दृष्टि से उन्नत करने के निमित्त पुरुषार्थ की योजना की थी। जीवन में भौतिक सुख के साथ-साथ आध्यात्मिक सुख भी महत्त्वपूर्ण था। वस्तुतः भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों जीवन परस्पर सम्बद्ध हैं।

भौतिक सुख के अन्तर्गत सांसारिक आकर्षण और ऐश्वर्य प्रधान माना गया तथा आध्यात्मिक सुख के अन्तर्गत त्याग और तपस्या। भौतिक सुख क्षणिक और अस्थिर है जो असत्य है तथा आध्यात्मिक सुख स्थायी और परमानन्द है, जो सत्य है। परन्तु जीवन में भौतिक सुख और आध्यात्मिक सुख दोनों का महत्त्व है। जीवन की सार्थकता इसी में है कि दोनों का समन्वित और सन्तुलित रूप ग्रहण किया जाए। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर पुरुषार्थ की अवधारणा का विकास हुआ।भौतिक अथवा लौकिक सुख के अन्तर्गत अर्थ और काम हैं तथा आध्यात्मिक अथवा पारलौकिक सुख के अन्तर्गत धर्म और मोक्ष।

पुरुषार्थ शब्द का अर्थ है-मनुष्य के जीवन का प्रयोजन की सिद्धि के लिए उद्योग। मनुष्य का मुख्य प्रयोजन है-सुखी जीवन। मनुष्य का जीवन तभी सुखी हो सकता है, जब उसकी आवश्यकताएं, इच्छाएं और लक्ष्य पूरे हो सकें। इन आवश्यकताओं, इच्छाओं तथा लक्ष्य पूरे हो सकें। इन आवश्यकताओं, इच्छाओं तथा लक्ष्यों को ध्यान में रखकर ही पुरुषार्थों की संख्या चार मानी गई है-धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इन पुरुषार्थों की सिद्धि मनुष्य ही कर सकता है और ये उसके जीवन के प्रमुख अभिलक्षित तत्त्व हैं, इसीलिए इनको पुरुषार्थ कहा जाता है।

E-learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

पुरुषार्थ का शाब्दिक अर्थ है-उद्योग। अतएव पुरुषार्थ से अभिप्राय निर्दिष्ट दिशा में किए जाने वाले उन उद्योगों से है जिनकी व्यवस्था से मनुष्य अपने जीवन के लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सके। साधारणतया पुरुषार्थ की व्याख्या करते हुए यह कहा गया गया है कि 'पुरुषैरर्थ्यते पुरुषार्थः' अर्थात् पुरुष की इष्ट वस्तु ही पुरुषार्थ है।

मनुष्य का सर्वाङ्गीण विकास पुरुषार्थ के माध्यम से ही होता है। पुरुषार्थ मनुष्य का वह आधार है जिसके अनुगमन से वह अपना जीवन जीता है तथा विभिन्न कर्तव्यों का मनोनिवेशपूर्वक पालन करता है। वह भौतिक पदार्थों, सन्तानों और सद्गुणों का भोग करने के बाद जगत् की परिधि से बाहर आकर भक्ति का मार्ग अपनाता और मुक्ति की ओर उन्मुख होता है। उसके जीवन के उत्कर्ष के निमित्त पुराकाल में आश्रम की व्यवस्था की गई थी, जिसकी सफलता पुरुषार्थ पर ही निर्भर थी। अतः पुरुषार्थ से मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास तो होता ही है, साथ ही समाज का भी उत्कर्ष होता है। इन्हीं पुरुषार्थों के बल पर व्यक्ति अपने समस्त कार्य सोत्साह करता है तथा जीवन, जगत् तथा परमात्मा के प्रति अपनी कर्मनिष्ठता ज्ञापित करता है। पुरुषार्थों से ही मनुष्य बौद्धिक, नैतिक, शारीरिक, भौतिक और आध्यात्मिक उत्कर्ष करता है। इस तरह मनुष्य लौकिक जीवन के प्रति जागरूक होते हुए पारलौकिक जीवन के प्रति भी उत्कण्ठित रहा है। वह अपने क्रियात्मक जीवन की अभिव्यक्ति धर्मगत भावना और आचारगत नैतिकता से करता रहा है। इस दृष्टि से पुरुषार्थ लोक और परलोक दोनों के निमित्त किए जानेवाले कर्म में आस्था रखता है तथा दोनों के सामञ्जस्य का सेतु बनता है।

धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों में मानव-जीवन का मुख्य लक्ष्य मोक्ष ही है। इसीलिए उसे चरम पुरुषार्थ कहा जाता है। शेष तीन पुरुषार्थों में अर्थ और काम ये दो ऐसे हैं, जिनके बिना मानव की सांसारिक यात्रा ही नहीं चल सकती। अर्थ एक ऐसा पुरुषार्थ है जिसके बिना भौतिक जगत् में किसी भी आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो सकती। उसकी तो जीवन में पदे-पदे आवश्यकता पड़ती है। काम मनुष्य का सहज धर्म है, उसको अलग कर मानव के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। यह भारतीय ऋषियों की विशेषता है कि उन्होंने चारों पुरुषार्थों के बीच धर्म का भी निवेश किया और उसको

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

प्रधान स्थान पर प्रतिष्ठित किया। धर्म, अर्थ और काम-इन तीन पुरुषार्थों के विषय में पूर्वजों ने यह निर्देश दिया कि मनुष्य को इन तीनों का सेवन समान रूप से करना चाहिए। जो मनुष्य इन तीनों में से किसी एक में ही आसक्त रहता है, वह जघन्य होता है।

मोक्ष को सर्वश्रेष्ठ पदवी दिये जाने के पीछे यही धारणा रही कि मानव ज्ञानवान् प्राणी है और उसके जीवन का लक्ष्य सांसारिक बन्धन से मुक्ति है। धर्म, अर्थ, काम ये तीनों पुरुषार्थ मोक्ष को ही लक्ष्य मानकर चलते हैं और मनुष्य उनके माध्यम से लक्ष्य तक पहुँचने के लिए समर्थ होता है।

एक प्रकार से पुरुषार्थ-सिद्धान्त के अन्तर्गत मनुष्य-जीवन की सभी अपेक्षाओं, आवश्यकताओं इच्छाओं तथा उद्देश्यों को ध्यान में रखकर ही उन्हें धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष-इन चार भागों में विभाजित किया गया है। उनमें जहाँ तक मोक्ष नामक पुरुषार्थ का प्रश्न है, वह मानवजीवन का अन्तिम लक्ष्य है। उसे सभी व्यक्ति प्राप्त नहीं कर सकते हैं। इस प्रकार 'मोक्ष' को आदर्शरूप मानकर शेष तीन (धर्म, अर्थ तथा काम) को त्रिवर्ग की संज्ञा प्रदान कर उन्हें जीवन में हर एक दृष्टि से विधेय माना गया है। परन्तु यहाँ यह बात ध्येय है कि भारतीय संस्कृति और समाज में धर्म को एक ऐसे नियामक तत्त्व या आचारसंहिता के रूप में मान्य किया गया है कि उससे भारतीय वर्णाश्रम-व्यवस्था का एक अंश भी अप्रभावित न रहे। अर्थ और काम उसी से अनुप्राणित होने पर प्रशस्य माने गए हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्राचीन काल के भारतीय विचारकों ने मनुष्य के जीवन को आध्यात्मिक, भौतिक और नैतिक दृष्टि से उन्नत करने के निमित्त पुरुषार्थ के नाम से अपने दार्शनिक विचारों की नियोजना और व्याख्या की।

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi